दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ माला—2

ज्ञानोदयतन्त्रम्

JÑĀNODAYA TANTRAM



सम्पादक :

प्रो० समदोङ रिनपोछे
योजना निदेशक

प्रो० व्रजवल्लभ द्विवेदी
उपनिदेशक

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द २५३१ खीष्टाब्द १९८८

सहायक मण्डल

जनार्दन पाण्डेय **डॉ० ठाकुरसेन नेगी**

बनारसी लाल **महेन्द्ररत्न वज्राचार्य**

वङ्छुग दोर्जे

मूल्य : रु० १५.००

प्रकाशक :

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान

सारनाथ, वाराणसी

मुद्रक :

रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी० 21/42 ए०, कमच्छा, वाराणसी

RARE BUDDHIST TEXT SERIES—2

JÑĀNODAYA TANTRAM



भोट विद्या संस्थानम्

Editors :

PROF. SAMDHONG RINPOCHE
Project Director

PROF. VRAJVALLABH DWIVEDĪ
Deputy Director

RARE BUDDHIST TEXT PROJECT

Central Institute of Higher Tibetan Studies

SARNATH, VARNASI

B. E. 2531

C. E. 1988

Co-Editors

Pt. Janārdana Paṇdeya **Dr. Thākur Sain Nagi**

Banārasī lāl **Mahendr Ratn Vajryāchārya**

Ven. Wangchuk Dorje

Price : *Rs.* 15.00

Published by :

Central Instituta of Higher Tibetan Studies.

Sarnath, Varanasi.

Pirnted by :

Ratna Printing Works, Kamachha, Varanasi.

प्रस्तावना

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना की परामर्शदात्री समिति के दिनांक 11–8–1987 के निर्णय के अनुसार 'धीः' के इस चतुर्थ अंक में ज्ञानोदयतन्त्र का प्रकाशन किया जा रहा है। यह तन्त्र क्रिया, चर्या, योग और अनुत्तर विभागों में विभक्त बौद्ध तन्त्रों के योग विभाग के अन्तर्गत आता है।

इसमें चित्त, वाक् और काय चक्रों के अन्तर्गत ध्येय दस भूमियों और चौबीस पीठों का विवरण देने के बाद शरीर में स्थित नाड़ियों और चक्रों का विवरण देकर उनकी भावना का प्रकार बताया गया है। इसके बाद सहजप्रज्ञा योग, वसन्ततिलक योग, समुत्पन्नक्रम योग और प्रज्ञोपाय योग का विवरण देकर षट्चक्र विशुद्धि और पंचज्ञान विशुद्धि की भावना का विस्तार किया गया है।

यह ग्रन्थ अतिसंक्षेप में बौद्ध तन्त्रों में वर्णित योग का समग्र वर्णन प्रस्तुत करता है। इस ग्रन्थ का तिब्बती अनुवाद उपलब्ध नहीं होता। इन विशेषताओं को देखते हुए ही दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना द्वारा प्रकाशनीय ग्रन्थों में इसका समावेश किया गया था। इसको विज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

जिन 11 हस्तलेखों के आधार पर इस ग्रन्थ के पाठों का निर्धारण किया गया है, उनका विवरण इस प्रकार है :—

क—राष्ट्रीय अभिलेखालय काठमाण्डू, नेपाल सं० 3|658, पत्र सं० 11, देवनागरी लिपि, पूर्ण। श्री जगन्नाथ उपाध्याय जी के संग्रह की प्रतिलिपि।

ख—रा० अ० का० ने० सं० 5|39, पत्र सं० 19, नेवारी लिपि, पूर्ण। श्री जगन्नाथ उपाध्यायजी के संग्रह की प्रतिलिपि।

ग—रा० अ० का० ने० सं० 3|338, पत्र सं० 20, देवनागरी लिपि, पूर्ण। डा० ठाकुरसेन नेगी के पास की प्रतिलिपि।

घ—इंस्टिट्यूट फार एडवांस स्टडीज आफ वर्ल्ड रिलिजन्स, अमेरिका एम० बी० बी०-II–184, पत्र सं० 13, नेवारी लिपि, पूर्ण। माइक्रोफिश के० ति० उ० शि० सं० सारनाथ, वाराणसी। फोटो प्रिंट तथा जिराक्स प्रति अस्पष्ट है।

ङ—इंस्टिट्यूट फार···अमेरिका, एम० बी० बी०-I–120, पत्र सं० 20, नेवारी लिपि, अपूर्ण (9–11) पत्र नहीं हैं। माइक्रोफिश के० ति० उ० शि० सं०। माइक्रोफिश अस्पष्ट है।

च—इंस्टिट्यूट फार···अमेरिका, एम० बी० बी०-I–72, पत्र सं० 13, नेवारी लिपि, अपूर्ण (अन्त में खण्डित)। माइक्रोफिश के० ति० उ० शि० सं०।

छ—संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट इन टोक्यो युनिवर्सिटी लाइब्रेरी जापान, सं० 143, पत्र सं० 11, नेवारी लिपि, पूर्ण। माइक्रोफिल्म के० ति० उ० शि० सं०।

ज—संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट इन टोक्यो···सं० 142, पत्र सं० 20, देवनागरी लिपि, पूर्ण। माइक्रोफिल्म के० ति० उ० शि० सं०।

झ—आशा सफू कुशी संग्रह, काठमाण्ड्, सं० 2।634, पत्र सं० 26, देवनागरी लिपि, पूर्ण। जिराक्स प्रति के० ति० उ० शि० सं०।

ञ—गायकवाड़ ओरियन्टल, इंस्टिट्यूट बड़ौदा, सं० 13279, पत्र सं० 9, देवनागरी लिपि, पूर्ण।

ट—इंस्टिट्यूट फार····अमेरिका, एम० बी० बी०-I-74, पत्र सं० 19, नेवारी लिपि, माइक्रोफिश प्रति के० उ० ति० शि० सं०। अस्पष्ट एवं अपठनीय।

इन 11 हस्तलेखों की सहायता से सावधानी के साथ संशोधन और सम्पादन करने के उपरान्त भी इस ग्रन्थ के कुछ स्थान अभी पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हो पाये हैं। इस सम्बन्ध में हम विद्वानों के सुझाव का स्वागत करेंगे।

इस ग्रन्थ के हस्तलेखों को सुलभ कराने में जिन व्यक्तियों और संस्थाओं ने सहायता की है, जिनका कि नाम निर्देश ऊपर किया जा चुका है, उनका हम आभार स्वीकार करते हैं। दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना में कार्यरत विद्वानों को भी हम धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने बड़ी तत्परता से पाठसंकलन, सम्पादन अदि कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न कर परिष्कृत रूप में इस ग्रन्थ को प्रस्तुत किया है।

एस० रिन्पोछे
निदेशक
दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना

PREFACE

The *Jñānodaya Tantra* which is of the Yoga genre of the Buddhist Tantra as of the three other classes, the Kriyā, the Caryā and the Anuttara Tantras, is being published here as a part of the first volume of the Rare Buddhist Minor Text Series, appearing in the *Dhī* review.

The text enumerates under wheels of the mind, speech and body the ten grounds (Bhūmis) and the twenty four establishments (Pīṭhas) to be reflected upon. These postulates precede the description of the nervous system and the numerous *Cakras* in the body. The awareness of the vital limbs is important in the comprehension of the esoteric system. The work further elicits understanding of the Sahaja-Prajñā Yoga, Vasanta-Tilaka Yoga, Samutpann-Krama Yoga and the Prajñopāya Yoga with the purifying methods of the six cakras and the five sensory perceptions.

The work presents a total view of yoga, as found in Buddhist esotericism. The Tibetan translation of the text has not been found. Keeping in view these importance the work is included in the texts to be published by The Project. We are happy to bring it out for the readers.

For the presentament of the text in its edited form acknowledgement is due to the following organisations for furbishing the contextual matters.

a. National Archives of kathmandu, Nepal. Ms. No. 3/658 fol. 11, Devanāgarī Script—Complete. Ms-in Prof. J. Upadhyaya's private collections.

b. NAKN. Ms. No. 5/39, fol, 19, Nevārī Script, Complete, J (Ms)

c. NAKN, Ms. No. 3/338, fol. 20, Devanāgarī Script, Complete. Ms with Thakur Sen Negi.

d. Institute for Advanced Studies of World Religions, U S A, Ms. No. MBB. II–184, fol, 13, Nevārī Script, complete, microfische copy in the Śāntarakṣhita Library, Saranath.

e. IASWR, U S A, Ms No. MBB, I-120, fol. 20, Nevārī Script, incomplete, microfische copy in Śāntarakşhita library, Saranath.

f. IASWR, Ms. No. MBB, I-72, fol. 13-Nevārī Script, incomplete fragile last part. microfische copy. in Śāntarakşhita Library, Saranath.

g. Sanskrit MSS in Tokyo University Library, Japan. MS. No. 143, fol. 11, Nevārī Script, complete, microfilm, Śāntrakşhita Library, Saranath.

h. SMTUL, MS. No. 142, fol. 20, Devanāgarī Script, complete, microfilm, Śāntarakşhita Library, Saranath,

i. Āshā Safu Kuśi collections, Kathmandu, MS. No. 2/634, fol. 26, Devanāgari Script, complete, zyrox copy in the Śāntrakşhita Library, Saranath.

j. Gaekwad Oriental Institute, Baroda, MS. No. 13279/29 fol. 9. Davanāgarī Script, complete.

k. IASWR, U S A, MS. No. MBB--174, fol. 19, Nevārī Script, microfische copy in the Śāntarakşhita Library, Saranath, illegible.

We are very grateful to individuals and the Institutes which made the mansuscripts available for us. I also express my pleasure for the work done by the scholars of the project in bringing it out in an accomplished form.

S. Rinpoche
Director
Rare Buddhist text Project

विषयसूची

ज्ञानोदयतन्त्रम्

ॐ नमः [1]सर्वज्ञाय[2]

अथातः संप्रवक्ष्यामि ज्ञानं ज्ञानोदयोत्तमम् ।
शरीरार्थं[3] च सर्वेषां ज्ञात्वा [4]यद्धेतुकारणात् ॥ 1 ॥

गिरिगुहायां महोदधौ नदीतीरे वृक्षमूले मातृकागृहे शिवालये उद्याने श्मशाने[5] चतुष्पथे विहारे चैत्यालये वा गृहे विजने निरुपद्रवेऽनुकूले कृतनिलये एषु स्थानेषु प्रदर्शयेत् ।

स्वभावशुद्धाः सर्वधर्माः स्वभावशुद्धोऽहमिति, प्रकृतिपरिशुद्धाः सर्वधर्माः प्रकृतिपरिशुद्धोऽहमिति निश्चित्य[6] [चित्ते] स्वदेहे [7]वाऽऽधाराधेयमण्डलमधिमुञ्चेत्[8] । अनेन शरीरं कूटागारं[9] समं[10] चतुरस्रं चतुर्द्वारं [11]चाष्टभिरङ्गैरष्टस्तम्भैः शोभितं मध्यमण्डलं रम्यं पञ्चतथागतं [12]पञ्चकामात्मकं [13]पञ्चचक्रम् । तत्र रोमाणि कीरकान्[14] चर्ममांसवज्रप्राकारमस्थिपञ्जरं वज्रपञ्जरं [15]थुलामाला[16]मलजालं च मणिवज्रवितानम्—

[17]वितानं [18]वारसिंहं च मध्ये[19]ऽष्टस्तबकं हृदि ।
कोणे[20]ऽष्टस्तबकं ज्ञात्वा खेटौ[21]फूफुसवुक्कचाः ॥ 2 ॥

चण्डालीज्वाला[22]मालानलार्कः [23]पण्यादिकं वज्रमयमधिमुञ्चेत् । अन्तरालं धर्मोदयमधिमुञ्चेत् । तत्र [24]कबन्धोऽर्धद्वयशूलभिन्नादिसु(सू)चकैश्चक्रं[25]मन[:]स्थानं पश्येत् । निषद्यादिकारकैर्द्विपुट[26]त्वेन द्विगुणं पृथिव्यप्तेजोवायुधात्वात्मकैः परिगतानष्टौ धातुं(तून्) स्वसनि(न्नि)त्यतया युक्ता[न]ष्टौ श्मशानानधिमुञ्चेत् ।

---

1. श्रीसर्व–च. । 2. 'ॐ नमः श्रीचक्रसंवराय' इत्यधिकः पाठः–घ. । 3. र्थश्च–क. ज. । 4. ये हेतु–ख.छ.झ.ञ । 5. नास्ति–च. । 6 निश्चिते–क. ग. ज. झ. । 7. वाधावाधेय–क. ख. ग. घ. ङ. च. छ. । 8. मुच्येत्–क ग घ. ज. । 9. कूटाङ्गारं–घ. छ. ज. ञ. । 10. समचतुरस्रचतुर्द्वारैः–च. । 11. वाष्टाभि–ङ. । 12. पञ्चकात्म–ख., पञ्चकायात्म–क. घ. च. छ. ज. झ. । 13. पञ्चक्रमं–छ. । 14. कील–छ. । 15. थूला–ख.च छ.झ.ञ , थूल–घ. । 16. मालासरजालं–ख. ग. घ. च. ज. झ. ञ. । 17. वीता–क ग. ङ. । 18. वाल–छ. । 19. मध्यष्ठास्ते–ग. ज., मध्यस्थं–घ., ष्ठं–ङ च झ. । 20. कोणष्ठां–ङ. च. ज. झ. । 21. खेर्वे–क. । 22. ज्वालावज्रज्वालानला–ख. घ. ङ. च. झ. ञ. । 23. पक्ष्या–ज.ञ. । 24. कबन्धोर्द्धत्वशायित–क. ख. ग. घ., द्वशा–ङ. झ. ञ., द्वन्द्वशा–च. । 25. चक्रमणस्था–घ छ.ञ., मशस्था–क.ग.ज., मूलस्थानं–ङ. । 26. द्विप्रभ–क., द्विपुल–ग , द्विपूत–झ. ।

ततः पादद्वयं(ये) धन्वाभं वायुमण्डलम्, नाभितले त्रिकोणमाग्नेयमण्डलम्, जठलं(रे) वर्तुलं वारुणमण्डलम्, कक्षस्थं(स्थे) चतुरस्रं माहेन्द्रमण्डलमधिमुञ्चेत् । उत्तमाङ्गमष्टश्रृङ्गसुमेरुमधिमुञ्चेत् । ततस्तत्पृष्ठेऽधिष्ठितं द्वात्रिंशद्दलकमलं तन्मध्ये चन्द्रमण्डलं तन्मध्यगता नाडी [1]सूक्ष्मं [2]खगमुखाकारमनाहतमालिकालिज[3]हूंकारं वज्रसत्त्वस्वरूपं ष[ट्]त्रिंशन्नाडीजनकं समधिमुञ्चेत् । तदुद्भवचन्द्रफलभवैः[4] शशाङ्क-संकाशं सहजसंभोगकायात्मकं [5]कालिस्वभावमुपायरूपं सुविशुद्धधर्मधातुज्ञानात्मकं श्रीहेरुकम्, ततः सहजनिर्माणनभोनिभं सर्वाङ्गप्रत्यङ्गसर्वाशाकाशव्यापकं स्व[ा]भाविक-कायात्मकमालिस्वभाव(वं) [6]प्रज्ञारूपं [7]शु(सु)विशुद्धधर्मधातुस्वभावं [8]वज्रवाराहीमधि-मुञ्चेत् ।

ततः समयचक्रात्मके तारु(लु)कमले पूर्वदले भगवतः पूर्वमूर्ति[ः] शब्दवहा दर्शनज्ञानरूपा शशानामनाडी डाकिनी, उत्तरमूर्तिर्गन्धवहा समताज्ञानरूपा क्षीरवहानाम-नाडी लामा । पश्चिमदले पश्चिममूर्ति[ः] रसवहा प्रत्यवेक्षणाज्ञानस्वभावस्निग्धा नाडी खण्डरोहा, दक्षिणदले दक्षिणमूर्तिः स्पर्शवहा कृत्यानुष्ठानरूपा मधुरानामनाडी रूपिणी । हृत्कमल इत्यपरमुखचतुर्षु [9]इत्ये[व] लोक[ाः] कथयन्ति, त्रिकोणेषु पत्रेषु च[10] सहस्रं प्रनाडिकाः[11] बोधिचित्तवहा वाहे(बाह्ये) [12]चतुःपूजारूपा बोधिचित्तकरोटकाः ।

इति महासुखचक्रं बुद्धभूमिवज्रमतितत्त्वं त्रिलोकं त्रिकायम्

ततः पूं जां ऊं आं गों लां दं[13]मां कां वं[14] त्रि कां[15] क्रां कां[16] लां[17] कां ह्रीं प्रं[18] गुं सां[19] सुं[20] नं सिं [21]मं कूं[22] इति बीजाक्षराणि यथास्थानं क्रमेण भावयेत् ।

ततः पुल्लीरमलयशिरसि खण्डकपालि[23]नखदन्तवहा अजानाडी प्रचण्डा, जालन्धरशिखायां महाकङ्कालकेशरोमवहा नाडी चण्डाक्षी, ओडियानदक्षिणकर्णे कंकार-(ल)[24]त्वङ्मलवहा [25]महानाडी प्रभामति(ती) । मस्तकपृष्ठे अर्बुदविकटदंष्ट्रि(ष्ट्री) मांसवहा बलानाडी महानासा । इति [26]पीठप्रमुदिता[27]भूमिपीठदानदुःखज्ञानम् ।

---

1. शुष्कं—च. । 2. खङ्ख—ङ.च. । 3. लितः—क. आलिज—छ. । 4. चन्द्रम्भाव—क ग., 'चन्द्रफलभवैः' नास्ति—ज. झ. ञ. । 5. 'कालि' नास्ति—क. ग. च. ज. । 6. प्रत्यङ्ग—ञ. । 7. शुचिशु—क. ख. ग. घ. । 8. वज्रवज्रवा—ङ. । 9. इत्यनो कथ—क. ङ. ज. । 10. चतुरस्रं—क. ख. ग. घ. ङ. च. ज. । 11. डिकां—ख. ग. ङ. छ. । 12. चतुर्भुजा—ङ. च. । 13. दें—ङ च. ज. । 14. भौँ—ङ.च., जां—ख घ., ऊं—ज. ञ. । 15. कांँ—ख.घ., कौँ—ङ.च.छ.झ. । 16. 'कां क्रां' इति विपर्यस्तः पाठः—छ. । 17. लं—ङ. । 18. प्रें—ङ. ञ. ञ. । 19. सौं—ङ. च. ज. झ. ञ. । 20. सूं—ख. च. । 21. मुं—ङ., मूं—च. । 22. कुं—ङ. । 23. पाल—ङ. । 24. त्वगाल—क. ख. ग. घ. ङ. च. ज. । 25. मला—छ. । 26. 'पीठ' नास्ति—घ. । 27. 'भूमिपीठ' नास्ति—क. ख. ग. ङ. छ. ज. झ. ञ. ।

गोदावरीवामकर्णे [1]स्वरवैरिणस्नायुवहा रजानाडी वि(वी)रमती, रामेश्वर-भ्रूमध्ये अमिताभा अस्थिवहा [2]पटानाडी खर्वरी। देवीकोटचक्षुर्द्वये वज्रप्रभा वुक्कवहा भगानाडी लङ्केश्वरी, ता(मा)लवस्कन्धद्वयो[3]र्वज्रदेह[4]हृदयवहा [5]चोद्धतानाडी द्रुमच्छाया। इत्युपपीठविमलाभूमि[6] शीलसमुदयज्ञानम्[7]। चित्तचक्रं धर्मं हूँ खर्वरी स्वर्गालयः।

कामरूपकक्षद्वयं अङ्कुरिकः[8] अक्षिवहा महानाडी ऐरावती। ओड्रे स्तनयुगले वज्रजटिले[9] पित्तवहा महानाडी महाभैरवी। इति क्षेत्रं प्रभाकरी[10]क्षान्तिनिरोधज्ञानम्।

[11]त्रिशकुनिनाभौ महावीरफुप्फुसवहा प्रभानाडी वायुवेगा। कोशले नासिकाग्रे वज्रहूंकार-अन्त्रमालावहा [12]हलानाडी सुराभक्षी। इति उपक्षेत्रम् अर्चिष्मती-[13]भूमिवीर्यमार्गज्ञानम्।

कलिङ्गे मुखे [14]सुभद्रगुणवर्तिवहा महानाडी श्यामादेवी। लम्पाककण्ठे वज्र-भद्रा[15] बलवहा[16] सौख्यदा नाडी सुभद्रा। इति छन्दोह-अभिमुखीभूमि[17]ध्यानक्षय-[18]ज्ञानम्।

काञ्चिद्वय[19](पायु) महाभैरवपुली(री)षवहा [20]घनानाडी हयकर्णा। हिमालये मेढ्रे विरूपाक्षां(क्षा) सीमान्तवहा सितानाडी खगानना। इति उपछन्दोहसुदुर्जयाभूमि-प्रज्ञाऽनुत्पाद[21]ज्ञानम्। इति वाक्चक्रम्। संभोग-आभूचरीमर्त्यभोगः।

प्रेतपुर्यां लिङ्गे महाबला[22] श्लेष्मवहा नाडी चक्रवेगा। गृहदेवतायां गुदे रत्न-वज्रपूयवहा[23] नटीनाडी खण्डरोहा। इति मेलापकदूरङ्गमाभूम्युपायो धर्मज्ञानम्।

सौराष्ट्रे ऊरुद्वयोर्हयग्रीवलोहितवहा स्फुटानाडी शौण्डिनी, सुवर्णद्वीपे जङ्घायामाकाशगर्भ[24]स्वेदवहा लतानाडी चक्रवर्मिणी। इति उपमेलापकम् अचलाभूमि-प्रणिधानमद्वयं ज्ञानम्।

नगल(र)पादाङ्गुलिषु श्रीहेरुकमेदोवहा बलानाडी सुवीरा। सिन्धौ पादपृष्ठे पद्मनर्तेश्वर[25]अश्रुवहा शठानाडी महाबला। इति श्मशानं साधुमतिभूमिबलसंवृत्तिज्ञानम्।

---

1. सुरवै–ख. ग. ङ. च. छ. ञ.। 2. परा–च.। 3. 'द्वयो' नास्ति–ज.। 4. देहा–छ. ज.। 5. छता–ञ.। 6. इतः परं 'भूमि' पदं नास्ति–क. ख. ग. च. छ. ज. झ. ञ। 7. स्थानम्–क. ग. घ.। 8. रिक–छ. ज.। 9. युगलवज्रतिल–क. ग. जटिल–ज.। 10. प्रभास्था-क. ख. ग. ज., प्रभास्य–च.। 11. त्रिशकुली–क. ग. ज. ञ.। 12. हल–क. ग. ज., लतानाडी–च.। 13. 'भूमि' नास्ति–क. ख. ग. च. छ. ज.। 14. सुभद्रा–घ., द्रे–च.। 15. वज्रप्रभा–घ.। 16. दलवहा–ख. ङ. च. छ. झ., उदरवहा–घ.। 17. 'भूमि'नास्ति–क.ख.ग.च.छ.ज.। 18. ध्यानकरं–क.। 19. काञ्चित्रिय–क. ग., हृदय–घ. झ. ञ., घ्रिय–ज.। 20. तना–क.ग.ज.। 21. अनुत्पन्न.–च.। 22. महाचण्डास्यवहा–क. ग.। 23. पूयमहामती–क. ग.। 24. शसंगर्भश्वेत–छ.। 25. नृत्येश्वर–क. ग. ज. झ.।

मरौ[1] अङ्गुष्ठयोर्वैरोचनश्वेत[2]वहा गणानाडी चक्रवर्तिनी । [3]कुलतायां जानु-द्वयं(ये) वज्रसत्त्वबालसिंघा[4]वहा समानाडी महावीर्या । इति उपश्मशानधर्ममेघा[5]ज्ञान-परचित्तज्ञानम् । इति काय[6]चक्रनिर्माणम् । ॐ पातालवासिनि पातालमधिकारः ।

एतेषां दशपीठ-दशभूमि-दशपारमितास्वभावम् । मुखपूर्वद्वारे उग्रानाडी काकास्या, दक्षिणनासा-उत्तरद्वारे घोरानाडी उलूकास्या, गुदे पश्चिमद्वारे अग्निवदनानाडी श्वानास्या, वामनासादक्षिणद्वारे तेजिनीनाडी शूकरास्या, वामकर्णे आग्नेये खड्गधारी नाडी यमदाती[7], दक्षिणकर्णे नैर्ऋत्ये चक्रीनाडी यमदूती, दक्षिणनेत्रे वायव्ये [8]सूची-मुखानाडी यमदंष्ट्री, वामनेत्रे ऐशाने स्वभावकुक्षिनाडी यममथनी ।

अत्र केचिदेवं वदन्ति—वामपादस्याग्रोत्तरं गुल्फपार्ष्णिदक्षिणगुल्फेषु[9] स्थिता या[10] द्वारपालिन्यः, दक्षिणपादस्याग्रे दक्षिणगुल्फपार्ष्णिवामगुल्फेषु स्थिताः कोणवा-सिन्या(न्यो) योगिन्या(न्यः) इति ।

एवमध्यात्ममाराध्य मण्डलं भावयेत् । यदि वाराहीमूलं विश्ववज्रतन्मध्य-[11] विश्वपङ्करुह[12]मन्त्र(न्त)श्चतुर्दलं बहिरष्टदलं बिन्दुरूपं[13] विभाव्य तन्मध्यगां निरालम्बां यावद् [14]नाडीत्रयैकरूपां[15] प्रभास्वरां[16] नालरूपां[17] वज्रवाराहीं भावयेत् । तत्र त्रिदलं(ले) बिन्दुरूपास्तिस्रस्तिस्रः शशाद्या नाडिका[18] डाकिन्यादिडाकिनीस्वभावा[19] विभाव्य नाडीचक्रान्तर्वर्तिव्यापकं महाज्ञानं [20]श्रीचक्रसंवरं यावदित्थं(च्छं) चिन्तयेत् । ततः [21]स्फूलयोगेन वाराहीमुत्थाप्य सुखस्थाने[22] सर्वतथागतांश्चोदयेत् । चोदितै-रमृतीभूतैर्यथोक्तमण्डलं सेवयेत् । ततोऽभिमुखीकृत्य अमृतरूपपरममन्त्रमावर्तयेत् । सैव पूजा, सैव स्मृतिः, स एवामृतास्वाद इति ।

इति[23]ज्ञानोदय(ये) नाडीचक्रात्मकपरमगम्भीरो[24]त्पन्नक्रमः

---

1. मरुत–क. ख. ग. ज. झ. ञ. । 2. खेट–ख.ङ.छ.ज.झ.ञ., विड्–घ. । 3. कुलजा–क., कुलताजा–ख.ग. । 4. भार्लसिंही–च. । 5. मेघा–ञ. । 6. कायक्रम–झ.ञ. । 7. दाढी–ञ. । 8. शुचिमु–क. छ.ज.ञ. । 9. गुल्फे प्रस्थितात्–क. ग. । 10. प्राद्वारपारिण्या–क. ख. ग. ज. ञ., प्रावारपारिण्या–घ. ङ. च, न्याद्वार–झ. । 11. मध्ये–ङ. च. । 12. सहे–ङ. च. । 13. 'बिन्दुरूपं' नास्ति–क. ख. ग. घ. छ. ज. झ. ञ. । 14. हृदयैक–घ. । 15. रूपात्–क. ग. ज. । 16. स्वरात्–क. ग. ज. । 17 नाड्यरूपात्–क. ख. ग. घ. ङ. च., नाडीरूपात्–झ. । 18. नाड़ी–च. छ. ङ. ञ. । 19. भावं–क. ख. ग. घ. । 20. श्रीमहाचक्र–छ., श्रीचक्रसंवरसंवरं–झ. ञ. । 21. स्फुलन–क. ग. ज. झ., स्फरण–ङ., स्फलन–ञ. । 22. स्थानेन–घ., स्थान्–ङ. । 23. तत्त्वज्ञानो–छ. । 24 .गभीरो–च. ।

जिह्वां तालुगतां कृत्वा योगी योगपरो भवेत् ।
योगजं [1]स्फारयेद् बुद्धं सर्वाशाकाशवस्तुषु ।। 3 ।।
सिद्धयते जन्मनीहैव मन्दपुण्योऽपि मानवः ।
गुरुपादप्रसादेन योगाभ्यासात्सेन(भ्यासवशेन) च ।। 4 ।।

तथा [2]चोक्तम्—

वीरस्य वीर[3]जिह्वायां जिह्वा ताल्वन्तरे पुनः ।
तालुदेशे तु वीरेशः कृत्वा ध्यानपरो भवेत् ।।
षण्मासात् सिद्धयते ज्ञानं चिन्तामणिरिवापरम् ।। 5 ।। इत्यादि ।

अथा[4]परयोग उच्यते—झटित्यात्मानं श्रीहेरुकं विभाव्य नाभिहृत्कण्ठशीर्षेषु चत्वारि चक्रं(क्राणि) चिन्तयेत् । तत्र नाभिमूले चतुःषष्टिदल[5]विशुद्धया चतुर्देवीनां षोडश-शून्यतादिस्वभावषोडशाब्दविशुद्धया वा चतुःषष्टिदलं त्रिकोणं विचित्रं निर्माणचक्रं दलेष्व-नुरो(लो)मतः ककारादीनि द्वात्रिंशद्व्यञ्जनानि विलोमतस्तानि द्वात्रिंशद्व्यञ्जनान्येव च[6] मध्ये अंकारं प्रभास्वरं भावयेत् । हृदये[7] अष्ट[8]दलं चतुरस्रं कृष्टं[9] धर्मचक्रं तस्य दिग्लेषु ॐ[10]हूँ त्रां ह्रीं खँ तद्विदिग्दलेषु लाँ माँ पाँ ताँ तदूर्ध्वतो अ क च ट त प य [11]शं सा(शा)-न्तभूतभौतिकरूपं मध्ये[12] हूँकारं भावयेत् । कण्ठे षोडशशून्यताविशुद्धया वा[13]षोडशमर्ध-चन्द्राभं रक्तं संभोगचक्रम् । तस्य दलेषु षोडशस्वरा मध्ये [14]वंकारं भावयेत् । शिरसि द्वात्रिंशन्नाडीविशुद्धया द्वात्रिंशत्पुरुषलक्षणविशुद्धया द्वात्रिंशद्दलं [15]वर्तुलं शुक्लं महासुख-चक्रम् । तस्य दलेषु ककारादिद्वात्रिंशद्व्यञ्जनानि तदुपरि षोडशस्वराननुलोमतो मध्ये [16]हूँकारमनाहतश्रवं[17]चित्तधरं[18] विभावयेत् ।

[19]अथवाऽऽहुः—ऊर्ध्वंचक्रमधश्चक्रं त्रिकोणं[20] मध्ये चक्रद्वये [21]हुंकारमिति ।

---

1. स्फुर–क. ग. ज. ञ. । 2. प्रो–क. ग. । 3. वीरं–ञ. । 4. अथ प–ग., परो–घ. । 5. दण्ड–क.ख.ग.घ.च.ज.झ.ञ., दण्डविशुद्धाश्च–ङ, शुद्धांश्च–च. । 6. 'च' नास्ति–छ. ज. झ. ञ. । 7. 'हृदयेऽष्टपते-(त्र)विशुद्धया आर्याष्टाङ्गमार्गविशुद्धया अष्टौ विमोक्षविशुद्धया' इत्यधिकः पाठः–झ. । 8. मण्डलं–छ. । 9. कृष्ट्या–क., कृष्णा–ग. ज. झ., ष्णं–ङ. च. छ. । 10. 'हूं' नास्ति–क. ख. ग. घ. ङ. ज. झ. । 11. शः–च. ञ., सं–ज. । 12. मध्यहुं–क. ख. ग. झ. । 13. 'षोडशान्यप्रज्ञासंभोगविशुद्धया षोडशकान्तिविशुद्धया' इत्यधिकः पाठः–झ., 'वा' नास्ति–ज. ञ. । 14. ॐकारं–झ. भ. । 15. चतुर्दलं–ङ. च. । 16. हंकार–क. ख. ग. घ. ज. ञ. । 17. श्रवचि–ग. घ. ड. ज. ञ. । 18. धारं–ख. ग. घ. ङ. ज. झ. । 19. अथ त्वा–ख. घ. ङ. च. । 20. त्रिकोणमध्य–च., विकारं–क. ग. । 21. हंकार–ख. घ. च. ज., हूँकार–ञ. ।

[1]ततस्तेषु चतुर्षु चक्रेषु चतू[2](तुश्)चतूरूपान् यथाक्रमं विभाव्य विचित्र-विपाक-विमर्दविलक्षण—आनन्द-परमानन्द-विरमानन्द-सहजानन्द—दुःख-समुदय—निरोध-मार्ग[3]—आत्मतत्त्व-मन्त्रतत्त्व-देवतातत्त्व-ज्ञानतत्त्व—स्थावर-सर्वास्ति-संविति[4] - महासंघी—निष्पन्न—विपाक-पुरुषकार - वैमल्यानि—त्वरित-बाष्प - विवर्चं - विश्वस्थात्[5]—आचार्य-भिक्षु - श्रावणैरक[6]-चैरक[7]—परपीठ - आत्मपीठ - योगपीठ - तत्त्वपीठ—एकार-वंकार-मकार-यकार—लोचना-मामकी-पाण्डरा-तारा—कर्ममुद्रा - धर्ममुद्रा - ज्ञानमुद्रा-महामुद्रा—शून्यता -निर्मिता[8]- प्रणिहिता-अनभिस्कारा[9]—गंगा-सागर - प्रयाग- कुरुक्षेत्र—गया-वाराणसी - जगन्नाथ - काशी—कृत-त्रेता-द्वापर-कलि—पूर्वाह्ण-मध्याह्न-ऽपराह्ण-अर्धरात्रान्, शरत्-शिशिर - ग्रीष्म - वर्षा ओडियान-जालन्धर-देवीकोट-पुल्लीरान्, वात-पित्त-श्लेष्म-सन्निपातान्, सेवा-उपसाधन-रो(सा)धन-महासाधन—पृथ्वी-आप-तेज-वायु—मैत्री-करुणा-मुदिता- उपेक्षा—मृदुयोग-अनु - योग-नियोग-महायोग—पूर्वविदेह- जम्बूद्वीप - अपरगोदावरि-उत्तरकुरु—चतुःसागरस्वभाव—[10]शुभ्रवर्ण-पीतवर्ण रक्तवर्ण-हरितवर्ण—ॐकार-आकार - हूँकार - फट्कार—प्रज्ञा[11]-उपाय-कालि-आलि—धर्म-संभोग - निर्माण - महासुख—यंकार - रंकार - लंकार-वंकार—ब्राह्मण - क्षत्री-वैश्य-शूद्र—चन्द्र-सूर्य-तारा-राहु—पाताल-पृथ्वी-आकाश-स्वर्गांश्च क्रमेणाधिमुञ्चेत् ।

एवं बुद्धकायं चतुष्टयस्वभावं चतुश्चक्रं विभाव्य चक्रस्थबीजा[12]क्षरैर्मरीचिमुखेभ्यः सर्वतथागतान् [13]सर्वबोधिसत्त्वान् वीरयोगिनीमण्डलाकारेण संस्फार्य तान् विहितजगदर्थान् गृहीताखिलजिन[14]मतांस्तेष्वेव संहृत्य चक्रचतुष्टयं यावदित्थं(च्छं) भावयेत् । तदिदं [15]भावरत्नं चिरकालं भावयेत् । कायचतुष्टयं(य)लाभो इहैव जन्मनि संपद्येत[16] ।

इति ज्ञानोदये[17]चतुश्चक्रभावनायोगः

अथ नाडीत्रययोग उच्यते ।

कण्ठादारभ्य वामेना(न) प्रवृत्ताऽधोमुखी नाभिमण्डलगता मूत्रवहाऽऽलिव्याप्ता नाभेरारभ्य सव्येन प्रवृत्तोर्द्धं(र्ध्व)मुखी कण्ठपर्यन्तगता रक्तवहा कालिव्याप्ता ।

---

1. तत्र—ङ. । 2. 'चतू' नास्ति—क. ग. घ. । 3. मार्गान्—ग. घ. ङ. च. । 4. संवृति—ञ । 5. स्फात्—क. ग., स्थाने—च. । 6. मैरक—क. ग. घ. झ. । 7. नेरक—घ. च. । 8. निमित्ता—ङ. । 9. नाभिरका—ग., नाभिसंस्था—घ. । 10. श्वेत—च. । 11. उपायप्रज्ञा—ख. ग. च. । 12. वीता—क. ग. । 13. सबोधि—क. ग. ज. झ. ञ., संबोधि—च. छ. । 14. जिनज्ञानमतां—क. ख. ग. घ. ङ. च. ज. झ. । 15. सादरं निरन्तरं—ख.घ.छ. ज. ञ., सारदं—झ. । 16. द्यते—ञ. । 17. 'चतुश्' नास्ति—च. ।

तेन[1] प्रज्ञोपाय–शून्यताकरुणा–चन्द्रसूर्यं–आलिकालि–प्रवेशनिष्काश–दिनरात्रि-व(अ)स्तमनोदय–उत्तरायणदक्षिणायां(यन)–संभोगनिर्माण–स्वप्नप्रबोध–परमार्थसंवृति-सूक्ष्म-स्थूल–वेकारवंकार–कंकारअंकार–भावाभाव–ज्ञेयज्ञानौ(न)–ग्राह्यग्राहकौ(क)–ल(र)स-नाललना–इंगलापिंगला–एवमूनविंशत्याकारमधिमुञ्चेत् ।

मध्यमा तु नाडिका द्वयद्वयैकरूपाऽधोमुखी बोधिचित्तवहा कदलीपुष्पसन्निभा लम्बमाना तैलवह्निरिवादी(वोद्दी)प्ता धर्मकाय[2]वाक्चित्तैकरूपा सहजानन्ददायिका । एता एव तिस्रो नाडिका(:) । कुह सन्धिर्भवेत्(?) एकीभावः । योनिनाड्यो भवन्ति । ताः पुनस्त्रि[3]भवपरिणता ग्राह्यग्राहकवर्जिता महासुखकायात्मिका[:] [4]शून्यताकरुणाभिन्नं(न्न)-बोधिचित्तस्वभावा इत्यधिमुञ्चेत् ।

तद्गतैकमानसो[5] मन्त्री यावदिच्छं तिष्ठेत्[6] । नियतं प्रज्ञोपायाद्वयसिद्धिः(द्धीः) संपश्येत[7] ।

इति ज्ञानोदये नाडीत्रयभावनायोगः

अथ सहजप्रज्ञायोग उच्यते—

निर्माणचक्रमध्यस्था प्रज्ञावर्णाग्ररूपिणी ।
कर्ममारुतनिर्धूता ज्वलन्ती सहजात्मिका ॥ ६ ॥
विद्यु[8]च्छता(त)प्रतीकाशा सुसूक्ष्मा बिसतन्तुवत् ।
[9]विभाव्योत्थापयेन्मन्त्री सद्गुरू(रोरु)पदेशतः[10]॥ ७ ॥

ततस्तान् धर्मसंभोगचक्रमा(गां)स्तथागतान् सबोधिसत्त्वगणान् दग्ध्वा निष्काश-मार्गेण निष्क्रम्य उपायं त्रि[:] प्रदक्षिणीकृत्य ऊर्णाकोशान्(कोश)गतान् भावयेत् । ततो मर्मोद्घाटकद्वारेण निःसृत्य दशदिग्गतानां बुद्धबोधिसत्त्वानां प्रवेशमार्गेण प्रविश्य जाल-न्धरगतांश्चक्रस्थान् ससुतान् सर्वसुगतान् दग्ध्वा गृहीतं तत्पीयूषरसं शिखारन्ध्रेण निर्गत्य स्वप्रवेशमार्गेण प्रविश्य दग्धांस्तथागतादि(तांस्त्रिः) प्रदक्षिणीकृत्य ओडियानेन निर्गत्य जालन्धरेण प्रविष्टांश्चिन्तयेत् । तत्र तत्र श्रवन्ती क्षीरधारा वहन्तः(न्ती) सीमान्तरगता[न्]

---

1. ते पुनः–क. ख. ग. घ. ङ. च. झ. । 2. वाग्भिर्नैक–क. ङ., बोधिचित्तैक–च. । 3. विभव–क.ङ., परिरता–क. ग. ङ. । 4. 'शून्यता' नास्ति–क. ख. ग. ङ. ज. । 5. मानसामग्रीं–क. ङ. । 6. तिष्ठतु–ग., इष्टतु–क. ङ. । 7. संपश्यते–ख. घ. ङ. ज. ञ. । 8. विशुद्धता–क. ङ. । 9. विविच्योत्था–क. ग.ङ. । 10. देशक–ज. झ. ञ. ।

दग्धा[न्] तथागतांस्तोषयन्ती[1] पुनरपि निर्माणचक्रे स्थितान् पश्येत् । एवमरहत(ट्ट)-घटिकावच्चित्तविश्रामपूर्वकं पुनः पुनर्भावयेत् । एवम[2]भ्यस्यते(तोऽ)चिरादेव महामुद्रा[3]-सिद्धिरभिमुखी भविष्यति ।

इति ज्ञानोदये सहजप्रज्ञायोगमि(ग इ)ति

[4]अथापरयोगः कथ्यते ।

निर्माणचक्रमध्यस्थां ज्वलन्तीमालीं(लिं) संक्षेपरूपां तिलकाख्यां प्रज्ञामुत्पत्य धर्मचक्रगतेन कालिसंक्षिप्तरूपेण श्रवदमृतधारेण वसन्ताख्येनोपायेन सहजसमापन्नामनु-रक्तामा स(सं)क्षोभ्य सानन्दा(न्दां) भावयेत् । तत्र स्फरणयोगेन व्याप्ताशेषाकाशभावं तामधिमुञ्चेत् ।

इति ज्ञानोदये वसन्ततिलकयोगः

[5]एषामन्यतमो योगः कर्तव्यः सिद्धिमिच्छता ।
तत्राक्षसूत्रेण नियमो जपो ध्यानं तथार्चनम् ॥ ८ ॥
न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो न चाहुतिः ।
न च धर्मसमादाय[ः] प्रतिमावन्दना न च ॥ ९ ॥
न पूजा [न] परं ध्यानं न मण्डलं तथार्चनम् ।
स एव नियमः[6]पीठे वन्दना सैव योगिनः ॥ १० ॥
सिद्धौ[7] च वसुधादीनां लय[ः] [8]स्याद(द्व)शवर्ति ते[9]।
ज्ञानमात्रं [10]सदा तिष्ठेद् [11]भासुरो गगनोपमः ॥ ११ ॥
निमित्तसिद्धिं जानीयान्निमित्तानि[12] तु पञ्चधा ।
अतः संलक्ष्य(क्ष)येत्[13]तानि योगि(गी) धारणचेतसा ॥ १२ ॥
प्रथमं मरीचिकाकारं धूमाकारं द्वितीयकम् ।
तृतीयं खद्योताकारं चतुर्थं दीपवज्ज्वलेत् ॥
पञ्चमं तु सदालोकं निरभ्रं गगणसन्निभम् ॥ १३ ॥

इति पञ्चाकारमिति ।

---

1. यन्ति–ञ. । 2. मत्यास्यते–क. ख. ग. घ. ङ. छ. झ., मुत्पश्यते–च. । 3. समुद्रा–ख. घ. च. । 4. 'अथ' नास्ति–ख. छ. ञ., अथ पर–ग. ज. झ., अपरो–च. । 5. यथा मन्यते मायागः–क. ग. घ. ङ. । 6. मोऽपोत्थं–क. घ. ङ. । 7. सिन्धौ–क. घ. ङ. । 8. स्मा–ग. । 9. मे–ज. झ. । 10 तदा–च. छ. ज. झ. ञ. । 11. दास्तरो–क. घ. ङ., हास्त–ग. । 12. त्तहानि–क. ङ. ज. । 13. लक्षताज्ञानि–क. ग. ङ. ज. ।

एवमभ्यस्यतः[1] सम्यग् योगिनो योगसंभवात्[2] ।
महामुद्राह्वया[3] सिद्धिर्जायते नात्र संशयः ॥ 14 ॥
किं पुनः सिद्धयः क्षुद्रा[:] खड्गवेतालकादयः ।
अणिमादिगुणाश्चापि महाभिज्ञादयस्तथा ॥ 15 ॥

समाप्तोऽयं समुत्पन्नक्रमयोगः

शुक्ला याऽस्ति अथ कृष्णा दशम्यां कृतमण्डला(लः) ।
वीरवीरेश्वरीपूजां विदध्याद् विधिवत् सदा ॥ 16 ॥
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां शुक्लपक्षे च साधकः ।
संपूज्य वीरयोगिन्या(न्यो) विधिना मदनैर्बलैः ॥ 17 ॥
एवं संपूजिताः स्तोत्रं(त्रैः) पुष्टिमि(मृ)च्छन्ति सर्वथा ।
तुष्टाः सिद्धिं[4] प्रयच्छन्ति तस्मात्पूजा(ज्याः)सदैव ताः॥ 18 ॥
वामोद्गतं[5] यत्र जगत् सर्वं स्थावरजङ्गमम् ।
अतः सर्वाणि कर्माणि कुर्याद् वामेन पाणिना ॥ 19 ॥
वामोच्चारो[6] भवेद् योगी वामसर्वार्थसाधनः ।
वामजापकरो नित्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ 20 ॥
इति सञ्चिन्त्य योगीन्द्रः सर्वशङ्काविवर्जितः ।
सिंहवद् विचरेत् [7]स्त्रीभिः सदा योगेन तत्परः ॥ 21 ॥
पञ्चस्वपि च वर्णेषु विचरेदेकवर्णवत् ।
निर्विकल्पात्मको भूत्वा भुञ्जयेत् कामपञ्चकम् ॥ 22 ॥
योगिनीभिश्च्युतो योगी नीयते परमं पदम् ।
पूजाभि[8]र्बाह्यगुह्याभिः संपूज्या(ज्य) च विधानतः ॥ 23 ॥
कृत्वाऽसौ संवरस्य त्रिभवभवस्वभोः[9] साधनं संवराग्रं
यन्मे पुण्यं प्रसूतिं(तं) विध(धु)करविमर(लं)[10] दोषविध्वंसदक्षम्[11] ।
तेनास्य सर्वसत्त्वास्त्रिभवभयहरश्रीसुखस्फीतगात्रा
वीराः श्रीहेरुकाद्या निजयुवतियुता आत्मगोत्रानुरूपाः ॥ 24 ॥

इति ज्ञानोदये प्रज्ञोपाययोगः

---

1. मत्यस्यते—क. । 2. संभवेत्—घ. । 3. द्रांकया—क.ग.ङ.झ. । 4. ऋद्धि—क.ख. । 5. गता—क.ख.ग.घ.ङ. ज. । 6. वामचारो—ज.झ.ञ. । 7. नित्यं—छ.ञ., त्रिभिः—झ. । 8. रार्यगुह्या—क, वार्यगुह्या—ग. । 9. भवे—क.ख.ग.ङ.च.छ.ज. । 10. विसरं—च. । 11. विद्युत्सुदक्षं—ख. घ. ङ. च. छ., सदक्षं—क. ग. ।

अथ षट्चक्रविशुद्धिमाह—

शिखास्थाने ललाटे च कण्ठे हृदयनाभितः ।
लिङ्गेषु त्रिदलं पद्मं चतुःषष्टयष्टषोडशम् ॥ 25 ॥
द्वात्रिंशं[1] चतुर्दलं चैव बोधिबीजेन[2] शोभितम् ।
व्यञ्जनं च स्वरं तेषां मातृकास्वरव्यञ्जनम् ॥ 26 ॥

[3]त्रये दले रं च ह्लींकारं वज्रयोगिनी वंकारं हूँकारं हेरुकं ध्यात्वा षट्चक्र परिकीर्तितम् । षट्चक्रः [4]षट्पटाकारमधिमुञ्चेत् । तद्यथा—

वज्रसत्त्वः, अक्षोभ्यः, अमोघसिद्धिः, वैरोचनः, रत्नसंभवः, अमिताभश्चेति षट्जिन[5]स्वभावम् । सर्वस्कन्ध-विज्ञानस्कन्ध-संसारस्कन्ध[6]-रूपस्कन्ध-वेदनास्कन्ध-संज्ञानस्कन्ध[7]इति षट्[8]स्कन्धाकार.(रम्) । [9]विज्ञानधातु-आकाशधातु-वायुधातु-पृथ्वीधातु-तेजोधातु-तोयधातु इति षट्धातुस्वभावम् । मनः-श्रोत्र-घ्राण-काय-चक्षुर्जिह्वा षडिन्द्रिय-स्वभावम् । शब्द-धर्मधातु-स्पर्श-गन्ध-रस-रूप इति षड्रसः । धर्मधात्वीश्वरी[10]-स्पर्श-वज्री-तारा[11]-लोचना-मामकी-पाण्डरा षट् तारा[12] चेति । हेर-नील-मल्प-मुक्ति-कर्केतन-पद्मराग षड्धातुः । इदं ब्रह्माण्डसदृशाकारं ब्रह्मभुवनं गुह्यचक्रं धर्मोदयाकारम् ।

धर्मोदयामहोद्याने नानाकुसुमविराजिते ।
शुक्लरक्तादिपुष्पेण फलप्रसवमण्डितम्[13] ॥
[14]महाधर्मव्याख्यानस्थाने[15] [16]प्रसवभूमिसम्पदम् ॥ 27 ॥

अथ नाडीत्रयभावना—

ललना प्रज्ञास्वभावेन रसनोपायसंस्थिता ।
अवधूती मध्यदेशे तु ग्राह्यग्राहकवर्जिता ॥ 28 ॥
कदलीपुष्पसंकाशं(शा) लम्बमाना त्वधोमुखं(खी) ।
तैलवह्निरिवोद्दीप्ता बोधिचित्तसमावहा ॥ 29 ॥
सावधूती स(सु)विज्ञाय(ता) सहजानन्ददायिका ।
प्रधाना[17] सर्वनाडीनां ललनाद्यास्तु नाडिकाः ॥ 30 ॥

---

1. शच्चतुर्दले—क.ख.ङ.छ.ज. । 2. वीर्येण—ङ. । 3. त्रयदलरंचनयो—क., त्रयं दं लं रं च ह्लींकारयो—ङ. ज , त्रयदलं च ह्लींकारं वज्रयो—घ. च. । 4. चक्रमध्यपकार—क., चक्रं—ङ., षड्घटाकार—ग. घ. ज. । 5. जित—क. । 6. 'स्कन्ध' नास्ति—च. । 7. संज्ञास्कं—च.छ. । 8. षट्चक्रस्कन्धा—च. । 9. ज्ञान—ज.झ. । 10. धात्वे—ज.ञ. । 11. वती—क. । 12. तारादेवी—च. 13. ते—क.ख.ग.घ.ङ.च. । 14. सद्धर्म—च. । 15. स्थानेन—क. ख.ग.घ.ङ.च.छ. । 16. प्रशस्त—ज.ग. । 17. प्राधान्य—झ ।

अत एवा[1]श्रयामन्या गङ्गासिन्धुपरापगाः[2] ।
ता एव [3]योनिनाड्या(ड्यः) स्युरेकी[4]भूताः खगानना ॥ 31 ॥
संभोगकायरूपात्मा जानीयाद् देहमाश्रिताः ।
तिस्रस्त्रिया[5](स्त्विमाः) प्रधाना या ललनाद्यास्तु नाडिकाः ॥ 32 ॥
ललना संभोगिककायो ल(र)सना निर्माणिकी तनुः[6] ।
अवधूती धर्मकाय[ः] स्यादिति कायत्रयो मतः ॥ 33 ॥
एता नाडिकाः सर्वाः शरीरशुभकारिणी ।
तस्याः समूहसंजाता(तं) पिण्डेन देवतात्मकाः ॥ 34 ॥
पिण्डातीतं भवेत् पिण्डं पिण्डातीतं च देवता ।
तस्मादचित्तयोगेन तथतामयसर्वगा ॥ 35 ॥
प्रवेशाद्[7] वै भवेत्सृष्टि[ः] स्थिति[ः] निश्चलरूपतः ।
विनाशो निर्गतो वायुर्यावज्जीवं प्रवर्तते ॥ 36 ॥
प्रत्यक्षं[8] भावयेत् स्वाङ्गे तिष्ठति[9] चक्र उष्णीषे ।
कर्मनित्यक्रमे चैव ललाटे विधि भावयेत् ॥ 37 ॥
खाद्यभोज्यं तथा पिबेत् [10]कण्ठचक्रं विभावयेत् ।
सम्पूर्णं खादयेत् पश्चाद् हृच्चक्रे सुखं तिष्ठति ॥ 38 ॥
मध्याह्ने भावयेद्योगं [11]नाभ्यक्ता क्रम भावयेत् ।
सन्ध्यान्ते गुह्यचक्रे तु प्रज्ञोपायसुखं भवेत् ॥ 39 ॥
येन येनैव भावेन फुल्लितः सर्वहेतुना ।
तेन तेनैव[12] योगेन साधकी[13] सिद्धि[14]मुक्तिदम् ॥ 40 ॥
वर्षं च बह्वतिक्रान्तं [15]मूर्धंमूर्द्धगतं भवेत् ।
निर्वाणा[16]कारं जानीयाद्विनिर्गतपुष्टिशो[17]षयोः ॥ 41 ॥

---

1. वशया—क. ग. ज. झ. ञ. । 2. परोपया—ख. ङ. च., परायणा—घ. । 3. योगिनीनाड्या—क. ङ. ज. ञ., योगिन्याद्याः—घ. । 4. स्युरकीर्तिताः—क. ग. ज. । 5. स्त्रिमस्त्रिमा—क. ग. ङ. । 6. ततः—ख. घ. ङ. च. । 7. शार्द्धं—क. ग. ज. । 8. प्रत्येकं—क. ग., प्रत्यक्ष—ख. घ. च छ । 9. भोष्टानि—क. ज । 10. घण्ट—ङ. च, चक्रे—ञ. । 11. नानेका—क. ग., नोत्यक्ता—ङ. च., नाङ्का—ज, नात्यक्षा—ञ. । 12. तेन च—क ख. । 13. कीः—क. ख. ग. घ. ङ. च. । 14 मुक्तिसिद्धि—घ. ङ. च. । 15. मुद्रमूर्ध—क. ज. । 16. णकालं—च. । 17. त्यष्टिषो ययोः—क. ख. ञ, ययौ—घ. ज., पुष्टिपोषयोः—च. ।

कुतो ध्यायान्मृत्युकाले धर्मचक्रे स्वयंभुवः[1] ।
स(त)एव भावमात्रेण गच्छन्ति च सुखावतीम् ।। 42 ।।

हृदया[2]ब्जगतं वायुः(युं) शीतहूँकारसन्निभम् ।
ध्यायात् समाहितो योऽसौ भवेन्निर्वाणकारकः ।। 43 ।।

संसार ऊर्ध्वगो वायुर्निर्वाणं स्यादधोगतम्(तः) ।
अप्रतिष्ठितनिर्वाण(णं) हृदयाम्भोरुहस्थिता(तः) ।। 44 ।।

[3]चक्रैः षड् ज्ञायते धीमान्[4] गुह्यचक्रं विनिर्गतम् ।
स एवंभूतजातीयान्[5] मलमूत्रेषु [6]ज्वालयेत् ।। 45 ।।

सैव निर्माणकं ज्ञेयं शरीरे नालके जले ।
धर्मचक्रं शुभकुले नोयते सुखात्मकः(कम्) ।। 46 ।।

नारके अवीचिकण्ठे ललाटे देवशासने ।
उष्णीषं साधकं ध्यात्वा[7] गच्छन्ति अधिमुक्तिके[8] ।। 47 ।।

इदं पश्यथ भूतानां धर्मकर्म कुरु क्षणम् ।
संयोगं[9] पवनं भेदं[10] सदृशी(शो) नास्ति कस्यचित् ।। 48 ।।

द्रव्येषु काष्ठेषु च मृत्तिकासु शिलासु चित्तेषु न सन्ति देवाः ।
सर्वेषु देवा मनसो विकारास्तस्मान्मनसाऽऽचरत्ये[11]तदेवम् ।। 49 ।।

आत्मना सर्वबुद्धत्वं सर्वस्वं चित्तमेव च ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन आत्मानं पूजयेत् सदा ।। 50 ।।

न[12] वन्दयेद्धीमान् देवान् काष्ठपाषाणमृण्मयान् ।
चित्तादेव भवन्तीति कल्पते भावहेतुना ।। 51 ।।

इति ज्ञानोदये षट्चक्रविशुद्धियोगः

---

1. स्वयं भवेत्–क. ग. ज., भुवे–च. । 2 हृदयाक्षि–क. ख. ग. घ. ञ., हृदयाक्रमणं–च. । 3. चक्रे–क. ग. । 4. ऽधिमानं–क ख. ग. । 5 जानीयात्–छ. ज. ञ., यान् नित्यमूल–च. । 6. मेलयेत्–क., जोलयेत्–ग. ङ. ज. ञ. । 7. ज्ञात्वा–क. ख. ग. घ. ङ. च. झ. । 8. मुक्तिवै–क. ख. ग. घ. ङ. च. झ. । 9. योगे–च. । 10. भेदे–च. । 11. चरमेत–क. ख. ग. घ. छ. ज. ञ. । 12. वन्देद्धी–ग. घ. ङ च. छ. ज. झ. ञ. । 'न चापि वन्दयेद् देवान्' इत्यद्वयसिद्धि(15 श्लो०)–सुभाषितसंग्रह(पृ० 54)-स्थितः पाठः ।

अथ बाह्याध्यात्म[1]पञ्चज्ञान[2]विशुद्धिमाह—

ततश्चतुर्दलकमलोपरि मध्ये श्रीवज्रवाराहीरूपं [3]चूर्णीकृतरक्तवर्ष(र्ण)[4]मद्यं पद्मभाजनं पश्येत् ।

(1) पूर्वदले डाकिनीरूपं जलचरं आदिरक्तं मद्यं [5]शुक्तिपात्रम् ।

(2) दक्षिणदले रूपिणीरूपं वनचरं शुभ्रमद्यं नारिकेलपात्रम् ।

(3) पश्चिमदले खण्डरोहारूपमाकाशचरं मार्जाल[6]कमद्यं कूर्मपात्रम् ।

(4) उत्तरदले लामारूपं पृथ्वीचरमग्निमद्यं कांस[7]पात्रम् ।

एते(वं)रूपान् विभाव्य ततः कुण्डेन पातालं वरुणभुवं पात्रेण स्वर्गं त्रिभुवनं त्रिकायं त्रिरत्नं त्र्यक्षरं त्रियानं त्रिशरणं त्रिसन्ध्याः—इति त्रयरूपाख्यं विभाव्य कुण्डं पञ्च[8]सारं पञ्चाकारेण रूपमधिमुञ्चेत् । तद्यथा—प्रथमं गोकुदहनं पञ्चाङ्कुशमिति । चक्षुर्घ्राणश्रोत्रजिह्वामनःपञ्चेन्द्रियधातुम् । मध्यद्वीप-पूर्वविदेह-जम्बूद्वीप-अपरगोदावरी-उत्तरकुरु इति पञ्चद्वीपस्वभावम् । चक्रडाक-वज्रडाक-रत्नडाक-पद्मडाक-विश्वडाक इति पञ्चडाकजिनस्वभावो भवेत् । प्राणवायु-अपानवायु-समानवायु-उदानवायु-व्यानवायु इति पञ्चवायु-[9]रूपेति । [10]पाचिनी-मारणी-आकर्षणी-पद्मनृत्येश्वरी-पद्मज्वालिनी[11] पञ्च-चक्र[12]रूपेति, पीठ-क्षेत्र-छन्दोह-मेलापक-श्मशान इति पञ्चपीठरूपम्[13] । रूप्यधातु-शीशकधातु-सुवर्णधातु-ताम्रधातु-लोहधातु इति पञ्चधातुस्वभावम् । डोम्बि(म्बी)-शूद्री-क्षत्री-वैश्या-ब्राह्मी पञ्चजातीति, नर[14]वज्रधाते(त्वी)श्वरी-हस्तिलोचनी-गोमामकी-अश्व-पाण्डुरा[15]-श्वानतारा पञ्चदेवीसंभवेति[16] । आकाश-आप-पृथ्वी-तेज-वायु पञ्चमण्डल-स्वभावेति । रूप-शब्द-गन्ध-रस-स्पर्श-स्वभावम् । आदर्शण-समता-प्रत्यवेक्षणा-कृत्यानु-ष्ठान-शु(सु)विशुद्धधर्मधातुज्ञानं पञ्चज्ञानमिति । [17]श्रद्धा-वीर्य-स्मृति-समाधि-प्रज्ञा इति पञ्चेन्द्रियरूपं ततोऽभ्यन्तरे भावयेत्[18] ।

---

1. ध्यात्मिकं—क. ख. ग. घ. ङ. च. ज. । 2. पञ्चसार—ङ. ज. ञ., सालि—च. । 3. वर्ण—च. । 4. मयं—क. । 5. मुक्ति—क. ग. ज. ञ. । 6. रकमलं—च. । 7. कंत्रपा—क., कामपा—च., कंसपा—ज. । 8. सारेण—ज. ञ । 9. 'इति' नास्ति—ञ., रुत्पत्तिः—क., रूपम्—घ. । 10. पातनी—ङ., वाचनी—च. । 11. ज्वालो—क. ख. ग. घ. च. ज. झ. । 12. उत्पत्तिः—क. च. । 13. रूपां—क. च. । 14. नरः—ख. घ. । 15. पाण्डरी—ङ. छ ज. । 16. संभोति—ग. घ., संभाति—ङ. ज. ञ, समावेति—च. छ. । 17. शुद्धां—क. ख. ङ. झ. । 18. भावयन्—क. ।

दधिना बोधिचित्तरूपम्, [1]अम्रे(म्ले)न रक्तरूपम्, लवणेन पेयलरूपम्, तैलेन स्वेदरूपम्, चूर्णकृतमांसेन ब्राह्मण्यासारमांसरूपं विभाव्य पुनर्बोधिचित्त[2]रूपेण कोषपानं रक्तेन जलचर[3]रूपम्, पेयलेन वनचररूपम्[4], स्वेदेन आकाशचररूपम्[5], ब्राह्मण्यासारमांसेन पृथ्वीचररूपम्[6], एवंरूपान्[7] विभाव्य ततः स्वशरीरेण कुम्भं बोधिचित्ताद्या(द्य)चरुमयम्, मस्तकेन पात्रम्, अर्बुदेन पात्रस्थामृतस्वभावम्, हृस्तद्वयेन [8]कुण्डेष्वनन्तवासुकीरूपम्, कुचद्वयेन [9]चन्द्रार्धसूर्याकारम्—एवं[10]रूपांश्च स्वशरीरे सर्वान् [11]भावयित्वा पूजां च कारयेत्[12] ।

अन्य[द्] विवर्जयन्नित्यं स्वशरीरेषु भावयेत् ।
सर्वं च स्वशरीरेऽस्ति[13] तेन शरीरमुत्तमम् ।। 52 ।।

पुनर्बाह्यपूजाचूर्णकृतमेकेन अर्चयेत् । ततश्चूर्णकृतमेकेन [14]पञ्चाकारोऽस्ति, कथम् ? दधिना मध्ये कोषपानम्, अम्लेन[15] म्लेच्छरूपम्, लवणेन वनचररूपम्, तैलेन आकाशचररूपम्, चूर्णकृतमांसेन पृथ्वीचररूपम्, तदूर्ध्वस्थ[16]मांसेन गोकुदहनं पञ्चाङ्कुशरूपम् । एवमेतेन[17] बाह्यपूजां च कारयेत् ।

ततः स्वादस्य वर्णनमाह—चूर्णकृतरसून[18]सदृशम् । जलचर-मधु । वनचर-लवणम् । आकाशचर-तिक्तम् । पृथ्वीचर-आर्द्रस्वादम् । पञ्चरस-पञ्चस्वादरूपं बाह्यकषायाम्र(म्लं) [19]इत्येतेन षड्रसमधिमुञ्चेत् ।।

।। [20]इति ज्ञानोदयतन्त्रं समाप्तम् ।।

---

1. आमिषेण—च छ । 2. चित्तेन—क. ख. ग. घ. ञ. । 3. जलचरं—क. ख. ग. घ. ङ. ज. ञ. । 4. 5. 6. 'रूपम्' नास्ति—क. ख. ग. घ. ङ छ. झ. ञ. । 7. रूपं—च. छ. । 8. कुण्डस्थे—क. ग. ज., कुण्डस्य—घ. च., कण्ठस्थे—ङ. ञ । 9. अर्धचन्द्र—च. । 10. द्वया—क., रूपा—ख. ग. घ. च. झ. । 11. भावित्वा—क ख ग घ.ङ ज.झ.ञ. । 12 अत्र च. मातृका समाप्ता । 13. स्थितेन—ङ. । 14. पञ्चाकारोऽपि—क.ग.च. । 15 अमृतेन—क.ख.घ च. । 16. तदूर्ध्वमां—ङ., तदर्थस्तमां—क. ग., तदर्थमष्टमां—घ. । 17. मेतेनाचार्यपूजां—क ख. ग. घ. ङ. च. छ. । 18. कृसर—क.ग., कृतरसेन—घ ङ । 19. इत्यनेन—ज. ञ. । 20 इति ज्ञानोदयपञ्जिकायां बाह्यात्मिक कुम्भसाधनं समाप्तम्—ख. ङ. छ. झ. ञ. ।

ज्ञानोदयतन्त्रस्य श्लोकार्धानुक्रमणी

विशिष्टशब्दानुक्रमणी